

INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF MANAGEMENT SOCIOLOGY & HUMANITIES



ISSN 2277 – 9809 (online)

ISSN 2348 - 9359 (Print)

An Internationally Indexed Peer Reviewed & Refereed Journal

www.IRJMSH.com
www.isarasolutions.com

Published by iSaRa Solutions

विनोबा भावे के भूदान एवं ग्रामदान आंदोलन का राजनीतिक एवं सामाजिक प्रभाव: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. बृजेश स्वरूप सोनकर

असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग
कर्म क्षेत्र महाविद्यालय, इटावा (उ.प्र.)

सारांश

प्रस्तुत अध्ययन विनोबा भावे के नेतृत्व में संचालित **भूदान एवं ग्रामदान आंदोलन के राजनीतिक एवं सामाजिक प्रभाव** का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में भूमि के असमान वितरण, भूमिहीनता तथा ग्रामीण समाज में विद्यमान आर्थिक और सामाजिक विषमता महत्वपूर्ण चुनौतियाँ थीं। इसी संदर्भ में 18 अप्रैल 1951 को तेलंगाना के पोचमपल्ली से प्रारंभ हुआ भूदान आंदोलन स्वैच्छिक भूमि-दान के माध्यम से भूमिहीन ग्रामीणों को भूमि उपलब्ध कराने तथा ग्रामीण समाज में सामाजिक न्याय, सहयोग और अहिंसक परिवर्तन की भावना विकसित करने का प्रयास था। आगे चलकर ग्रामदान की अवधारणा ने व्यक्तिगत भूमि-दान को ग्राम-समुदाय की सामूहिक जिम्मेदारी और सहभागिता से जोड़ने का प्रयास किया। अध्ययन में ऐतिहासिक एवं दस्तावेजीय स्रोतों, सरकारी अभिलेखों तथा उपलब्ध प्रकाशित सामग्री के आधार पर आंदोलन का विश्लेषण किया गया है। भारत सरकार के उपलब्ध आँकड़ों के अनुसार भूदान के अंतर्गत 39.16 लाख एकड़ भूमि प्राप्त हुई, जिसमें से 21.75 लाख एकड़ भूमि ग्रामीण गरीबों में वितरित की गई, जबकि 17.41 लाख एकड़ भूमि वितरण के लिए शेष थी। इसी प्रकार उपलब्ध ऐतिहासिक अभिलेखों के अनुसार 15 नवंबर 1966 तक देश में 29,474 ग्रामदान गाँव दर्ज किए गए थे। ये आँकड़े आंदोलन के व्यापक विस्तार के साथ-साथ भूमि प्राप्ति और वास्तविक वितरण के बीच विद्यमान अंतर को भी स्पष्ट करते हैं।

अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि भूदान एवं ग्रामदान आंदोलन ने भूमि के प्रश्न को केवल आर्थिक समस्या न मानकर उसे **सामाजिक न्याय, ग्रामीण सत्ता-संबंधों, सामुदायिक सहयोग और लोकतांत्रिक सहभागिता** से जोड़ने का महत्वपूर्ण प्रयास किया। आंदोलन ने ग्रामीण समाज में स्वैच्छिक सहयोग और अहिंसक सामाजिक परिवर्तन की वैकल्पिक पद्धति प्रस्तुत की। हालांकि भूमि के स्वामित्व, अभिलेख, कानूनी विवाद, पंजीकरण तथा वास्तविक हस्तांतरण जैसी व्यावहारिक समस्याओं के कारण आंदोलन का प्रभाव सभी क्षेत्रों में समान और स्थायी नहीं रहा। अतः निष्कर्षतः भूदान एवं ग्रामदान आंदोलन ने ग्रामीण सामाजिक एवं राजनीतिक संरचना में परिवर्तन की महत्वपूर्ण प्रक्रिया को प्रभावित किया, किंतु उपलब्ध साक्ष्य इसके व्यापक और स्थायी राष्ट्रीय पुनर्गठन का पर्याप्त आधार प्रस्तुत नहीं करते।

मुख्य शब्द: विनोबा भावे, भूदान आंदोलन, ग्रामदान आंदोलन, भूमि सुधार, सामाजिक न्याय, ग्रामीण सत्ता-संबंध, लोकतांत्रिक सहभागिता, सर्वोदय।

प्रस्तावना

स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारत के सामने केवल राजनीतिक स्वतंत्रता को संस्थागत रूप देने की चुनौती नहीं थी, बल्कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था और सामाजिक संरचना में विद्यमान गहरी असमानताओं को दूर करना भी एक प्रमुख प्रश्न था। भारतीय ग्रामीण समाज में भूमि केवल उत्पादन का साधन नहीं थी, बल्कि वह आर्थिक सुरक्षा, सामाजिक प्रतिष्ठा और स्थानीय राजनीतिक प्रभाव का भी महत्वपूर्ण आधार थी। इसलिए भूमि के असमान स्वामित्व का प्रश्न ग्रामीण सत्ता-संबंधों और सामाजिक अवसरों की असमानता से सीधे जुड़ा हुआ था। स्वतंत्रता के बाद राज्य ने भूमि-सुधार को सामाजिक न्याय, कृषि विकास और ग्रामीण पुनर्गठन की व्यापक नीति का हिस्सा बनाया। प्रथम पंचवर्षीय योजना में भी भूमि-नीति का उद्देश्य संपत्ति एवं आय की विषमता को कम करना, शोषण को समाप्त करना तथा कृषकों और कृषि श्रमिकों को अधिक सुरक्षा प्रदान करना निर्धारित किया गया था।

1. स्वतंत्रता के बाद भारत में भूमि-असमानता और ग्रामीण सामाजिक संरचना

स्वतंत्रता के आरंभिक वर्षों में ग्रामीण भारत की भूमि-संरचना अत्यंत विषम थी। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण (NSS) के 1953-54 के आठवें दौर के आँकड़े इस असमानता का प्रारंभिक राष्ट्रीय चित्र प्रस्तुत करते हैं। उपलब्ध विश्लेषण के अनुसार, 1953-54 में ग्रामीण परिवारों के लगभग **23.09 प्रतिशत परिवार भूमिहीन** थे। इसी अवधि में स्वामित्व वाली भूमि के वितरण में बड़े जोत-स्वामियों का हिस्सा अपेक्षाकृत बहुत अधिक था। 1953-54 के NSS आँकड़ों पर आधारित विश्लेषण में 30 एकड़ या उससे अधिक भूमि रखने वाले स्वामित्व-धारकों के पास कुल स्वामित्व क्षेत्र का लगभग **30.45 प्रतिशत** था, जबकि 5 एकड़ से कम भूमि वाले परिवारों के पास कुल स्वामित्व क्षेत्र का लगभग **16.32 प्रतिशत** था। कृषि श्रम की स्थिति भी इस असमानता को स्पष्ट करती है। 1950-51 की Agricultural Labour Enquiry के अनुसार कृषि श्रमिक परिवार ग्रामीण अर्थव्यवस्था का एक बड़ा हिस्सा थे। उपलब्ध आधिकारिक सर्वेक्षण-आधारित विवरण में अखिल भारतीय स्तर पर लगभग **30.45 प्रतिशत ग्रामीण परिवार कृषि श्रम से संबंधित** पाए गए; इनमें लगभग **15.21 प्रतिशत परिवार ऐसे थे जिनके पास भूमि नहीं थी**, जबकि 15.24 प्रतिशत के पास कुछ भूमि थी।

इस प्रकार भूमि-असमानता को केवल भूमि के आकार के अंतर के रूप में नहीं देखा जा सकता। भूमि पर अधिकार ग्रामीण समाज में आर्थिक निर्भरता, श्रम-संबंधों, सामाजिक प्रतिष्ठा और स्थानीय शक्ति-संतुलन को भी प्रभावित करता था। स्वतंत्रता के बाद भूमि-सुधार का प्रश्न इसी कारण आर्थिक पुनर्वितरण के साथ-साथ ग्रामीण सत्ता-संरचना के पुनर्गठन का प्रश्न भी बन गया।

2. भूमि सुधार की आवश्यकता और राज्य के प्रयास

स्वतंत्र भारत के नीति-निर्माताओं ने भूमि-सुधार को ग्रामीण सामाजिक-आर्थिक पुनर्गठन का आवश्यक साधन माना। प्रथम पंचवर्षीय योजना में भूमि-नीति के प्रमुख उद्देश्यों में असमानता को कम

करना, शोषण को समाप्त करना, काश्तकारों एवं कृषि श्रमिकों को सुरक्षा देना तथा ग्रामीण समाज के विभिन्न वर्गों के लिए समान अवसर सुनिश्चित करना शामिल था। योजना में भूमि-सुधार के संदर्भ में मध्यस्थ भू-अधिकारों की समाप्ति, काश्तकारी सुधार, भूमि-स्वामित्व की अधिकतम सीमा निर्धारित करना तथा भूमिहीन श्रमिकों की स्थिति सुधारना प्रमुख विषय थे। स्वतंत्रता के बाद विभिन्न राज्यों ने **जमींदारी एवं अन्य मध्यस्थ भू-अधिकारों के उन्मूलन**, काश्तकारी सुधार, भूमि-सीमा निर्धारण, चकबंदी तथा अतिरिक्त भूमि के वितरण जैसे उपाय अपनाए। भारत सरकार द्वारा बाद में प्रस्तुत भूमि-सुधार संबंधी विवरणों में भी इन उपायों को भूमि-सुधार नीति के प्रमुख घटकों के रूप में रेखांकित किया गया है।

हालाँकि, सरकारी भूमि-सुधार और वास्तविक भूमि-पुनर्वितरण के बीच अंतर बना रहा। बारहवीं पंचवर्षीय योजना के आधिकारिक दस्तावेज के अनुसार, देश में लगभग **30 लाख हेक्टेयर भूमि अतिरिक्त (surplus) घोषित** की गई थी, लेकिन उसका लगभग **30 प्रतिशत हिस्सा मुकदमों में फँसा हुआ था और वितरित नहीं हो पाया था**। यह तथ्य बताता है कि भूमि-सुधार केवल कानून बनाने का विषय नहीं था; उसके प्रभावी क्रियान्वयन के लिए प्रशासनिक क्षमता, स्पष्ट भूमि-अभिलेख और स्थानीय सत्ता-संबंधों में परिवर्तन भी आवश्यक थे। इसी ऐतिहासिक परिस्थिति में भूमि के स्वैच्छिक पुनर्वितरण पर आधारित भूदान आंदोलन को समझना महत्वपूर्ण हो जाता है। यह राज्य द्वारा कानून के माध्यम से भूमि के पुनर्वितरण के समानांतर एक **नैतिक एवं अहिंसक सामाजिक पहल** के रूप में सामने आया।

3. तेलंगाना की पृष्ठभूमि तथा 18 अप्रैल 1951 को पोचमपल्ली से भूदान आंदोलन का प्रारंभ

भूदान आंदोलन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि तत्कालीन हैदराबाद राज्य के तेलंगाना क्षेत्र में उत्पन्न गंभीर कृषक-संघर्ष से जुड़ी हुई थी। 1940 के दशक के उत्तरार्ध में इस क्षेत्र में सामंती भू-संबंधों, बेगार अथवा *वेट्टी* (forced labour), लगान तथा अन्य प्रकार के ग्रामीण शोषण के विरुद्ध संघर्ष विकसित हुआ। जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के अभिलेखीय विवरण के अनुसार, तेलंगाना का कृषक आंदोलन 1948-51 के दौरान सामंती भू-व्यवस्था तथा निजाम के शासन से जुड़े दमन के विरुद्ध सशस्त्र संघर्ष के रूप में सामने आया; इस दौरान लगभग **3,000 गाँवों में समानांतर प्रशासनिक व्यवस्थाएँ स्थापित होने** का उल्लेख मिलता है। इसी तनावपूर्ण सामाजिक-राजनीतिक वातावरण में आचार्य विनोबा भावे अप्रैल 1951 में तेलंगाना पहुँचे। **18 अप्रैल 1951 को पोचमपल्ली (तत्कालीन नलगोंडा क्षेत्र)** में एक घटना ने भारतीय सामाजिक आंदोलनों के इतिहास में नया अध्याय आरंभ किया। विनोबा भावे के आधिकारिक अभिलेख के अनुसार, पोचमपल्ली में लगभग **700 परिवार** रहते थे और उनमें लगभग दो-तिहाई परिवार भूमिहीन बताए गए हैं। वहाँ दलित परिवारों ने भूमि की आवश्यकता व्यक्त करते हुए लगभग **80 एकड़ भूमि** की माँग रखी। इसी संदर्भ में स्थानीय भूमिधर **रामचंद्र रेड्डी ने 100 एकड़ भूमि दान करने की घोषणा की**। विनोबा ने इस घटना को भूमिहीनों की समस्या के समाधान के लिए स्वैच्छिक भूमि-दान की व्यापक संभावना के रूप में देखा।

इस घटना को भूदान आंदोलन का प्रारंभिक बिंदु माना जाता है। महत्वपूर्ण बात यह है कि यह पहल किसी पूर्व निर्धारित सरकारी भूमि-अधिग्रहण कार्यक्रम के रूप में नहीं, बल्कि स्थानीय स्तर पर नैतिक अपील और स्वैच्छिक दान से प्रारंभ हुई थी। बाद में यह पहल व्यापक आंदोलन में परिवर्तित हुई

और भूदान से आगे बढ़कर ग्रामदान की अवधारणा तक पहुँची। भूदान आंदोलन के विस्तार का एक संकेत इसके प्रारंभिक वर्षों में प्राप्त भूमि के आँकड़ों से मिलता है। विनोबा के समकालीन साहित्य में 1951 के बाद के वर्षों में लाखों एकड़ भूमि के दान की सूचना मिलती है, किंतु विभिन्न स्रोतों में “दान की गई”, “स्वीकृत”, “कानूनी रूप से हस्तांतरित” और “वास्तव में वितरित” भूमि की परिभाषाएँ अलग-अलग हैं। इसलिए इन आँकड़ों को एक ही राष्ट्रीय संख्या के रूप में प्रस्तुत करना उचित नहीं होगा। उदाहरण के लिए, भारत सरकार के एक आधिकारिक विवरण में कुल 39.16 लाख एकड़ भूदान भूमि दान में प्राप्त होने तथा उसमें से 21.75 लाख एकड़ भूमि वितरित किए जाने का उल्लेख मिलता है। यह अंतर आंदोलन की वास्तविक उपलब्धियों और उसके प्रशासनिक/कानूनी क्रियान्वयन के बीच मौजूद दूरी के अध्ययन के लिए महत्वपूर्ण है।

4. विनोबा भावे के सर्वोदय एवं अहिंसक सामाजिक परिवर्तन संबंधी विचार

विनोबा भावे के राजनीतिक-सामाजिक चिंतन का आधार सर्वोदय, अहिंसा, स्वैच्छिक सहयोग, ग्राम-आधारित सामाजिक पुनर्गठन और नैतिक परिवर्तन था। सर्वोदय का मूल आशय केवल किसी एक वर्ग के कल्याण के बजाय सभी के उदय और कल्याण से था। विनोबा के विचार में सामाजिक परिवर्तन का स्थायी आधार केवल राज्य की शक्ति या कानून नहीं, बल्कि व्यक्ति के नैतिक विवेक और समुदाय के सहयोग में भी निहित था। उनके आधिकारिक साहित्य में रचनात्मक कार्यक्रम को अहिंसा की सकारात्मक शक्ति विकसित करने वाला माध्यम बताया गया है तथा भूदान और ग्रामदान को सर्वोदय की व्यापक परियोजना के महत्वपूर्ण अंगों के रूप में प्रस्तुत किया गया है। विनोबा के लिए अहिंसा केवल हिंसा का निषेध नहीं थी, बल्कि सामाजिक संबंधों को सहयोग, प्रेम और पारस्परिक उत्तरदायित्व के आधार पर पुनर्गठित करने की पद्धति थी। उनके विचार-संग्रह में शांति को केवल युद्ध की अनुपस्थिति के रूप में नहीं, बल्कि भय और शोषण से मुक्ति के रूप में समझाया गया है। वे सामाजिक परिवर्तन के लिए रचनात्मक कार्य और अहिंसक साधनों पर बल देते हैं।

इसी विचारधारा के कारण भूदान को केवल भूमिहीनों को भूमि देने की योजना के रूप में देखना विनोबा के व्यापक उद्देश्य को सीमित कर देता है। उनका लक्ष्य संपत्ति-संबंधों में परिवर्तन के साथ-साथ मानवीय संबंधों और ग्रामीण समुदाय की संरचना में परिवर्तन करना था। 1961 के विनोबा साहित्य में भूदान से ग्रामदान की ओर संक्रमण को इसी व्यापक उद्देश्य से जोड़ा गया है—अर्थात् व्यक्ति द्वारा भूमि दान करने से आगे बढ़कर गाँव के स्तर पर सामुदायिक उत्तरदायित्व और साझा स्वामित्व की भावना विकसित करना। इस दृष्टि से भूदान आंदोलन स्वतंत्र भारत के ग्रामीण राजनीतिक चिंतन में एक विशिष्ट प्रयोग था। एक ओर राज्य भूमि-सुधार के लिए कानून, भूमि-सीमा और प्रशासनिक पुनर्वितरण जैसे औपचारिक उपाय अपना रहा था; दूसरी ओर विनोबा भावे स्वैच्छिक दान, नैतिक persuasion, अहिंसा और सामुदायिक सहयोग के माध्यम से भूमि-संबंधों में परिवर्तन का प्रयास कर रहे थे। इस प्रकार भूदान आंदोलन को राज्य-आधारित भूमि-सुधार और समाज-आधारित अहिंसक पुनर्वितरण के बीच एक वैकल्पिक प्रयोग के रूप में समझा जा सकता है। यही विशेषता इसे भारतीय राजनीति, ग्रामीण सत्ता-संबंधों और सामाजिक परिवर्तन के अध्ययन के लिए महत्वपूर्ण बनाती है।

शोध समस्या

स्वतंत्रता के बाद भारत में भूमि-असमानता ग्रामीण सामाजिक एवं राजनीतिक संरचना की एक महत्वपूर्ण समस्या थी। राज्य द्वारा जमींदारी उन्मूलन, काश्तकारी सुधार और भूमि-सीमा निर्धारण जैसे उपाय किए जाने के बावजूद भूमिहीनता, असमान भूमि-वितरण तथा ग्रामीण सत्ता-संबंधों में असमानता बनी रही। इसी पृष्ठभूमि में विनोबा भावे द्वारा प्रारंभ किया गया भूदान आंदोलन स्वैच्छिक भूमि-दान के माध्यम से भूमिहीनों को भूमि उपलब्ध कराने तथा ग्रामीण समाज में सहयोग और सामाजिक न्याय की भावना विकसित करने का प्रयास था। आगे चलकर ग्रामदान ने इस प्रयास को व्यक्तिगत भूमि-दान से आगे बढ़ाकर ग्राम-समुदाय आधारित सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्था से जोड़ने का प्रयास किया। इस संदर्भ में प्रमुख शोध समस्या यह है कि क्या भूदान एवं ग्रामदान आंदोलन केवल भूमि प्राप्त करने और वितरित करने तक सीमित रहे अथवा उन्होंने ग्रामीण सत्ता-संबंधों, सामाजिक न्याय, सामुदायिक संबंधों तथा राजनीतिक सहभागिता में भी वास्तविक परिवर्तन उत्पन्न किया? साथ ही, उपलब्ध भूमि-दान एवं भूमि-वितरण के आँकड़ों, कानूनी व्यवस्थाओं और ऐतिहासिक अभिलेखों के आधार पर आंदोलन की वास्तविक उपलब्धियों तथा उसकी व्यावहारिक सीमाओं का परीक्षण करना भी इस अध्ययन की केंद्रीय समस्या है।

उद्देश्य

- भूदान एवं ग्रामदान की राजनीतिक-सामाजिक भूमिका का अध्ययन।
- ग्रामीण सत्ता-संबंधों, सामाजिक न्याय और राजनीतिक सहभागिता पर प्रभाव का विश्लेषण।
- आंदोलन की उपलब्धियों एवं सीमाओं का तथ्यात्मक अध्ययन।

शोध प्रश्न

क्या स्वैच्छिक भूमि-वितरण ग्रामीण सत्ता एवं सामाजिक संबंधों में स्थायी परिवर्तन ला सका?

परिकल्पना

भूदान एवं ग्रामदान आंदोलन ने ग्रामीण सत्ता-संबंधों एवं सामाजिक संरचना में परिवर्तन को प्रभावित किया, किंतु उसका प्रभाव व्यापक और स्थायी नहीं हो सका।

सैद्धान्तिक आधार

प्रस्तुत अध्ययन में भूदान एवं ग्रामदान आंदोलन का विश्लेषण गांधीवादी राजनीतिक चिंतन, सर्वोदय एवं ग्राम स्वराज, सामाजिक न्याय, विकेंद्रीकरण, सहभागी लोकतंत्र तथा सत्ता एवं संसाधनों के वितरण की राजनीतिक अवधारणाओं के आधार पर किया गया। इन अवधारणाओं के माध्यम से आंदोलन के भूमि-पुनर्वितरण, ग्रामीण सत्ता-संबंधों, सामाजिक समानता, सामुदायिक सहभागिता तथा स्थानीय लोकतांत्रिक प्रक्रिया पर प्रभाव को समझने का प्रयास किया गया है। इस सैद्धान्तिक दृष्टिकोण से भूदान एवं ग्रामदान को केवल भूमि-दान की पहल न मानकर ग्रामीण समाज में सत्ता और संसाधनों के अधिक न्यायपूर्ण एवं सहभागी पुनर्गठन के प्रयास के रूप में विश्लेषित किया गया।

शोध-पद्धति

शोध का स्वरूप: वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक।

दृष्टिकोण: गुणात्मक एवं ऐतिहासिक।

प्राथमिक स्रोत: विनोबा भावे के लेखन एवं भाषण, भूदान-ग्रामदान अभिलेख, सर्व सेवा संघ की रिपोर्ट, सरकारी दस्तावेज, भूमि-सुधार संबंधी कानून एवं आधिकारिक आँकड़े।

द्वितीयक स्रोत: पुस्तकें, शोध-पत्र, शोध-प्रबंध एवं प्रमाणिक ऐतिहासिक अध्ययन।

विश्लेषण: दस्तावेजी, ऐतिहासिक, विषय-वस्तु एवं तुलनात्मक विश्लेषण।

भूदान एवं ग्रामदान आंदोलन की पृष्ठभूमि

स्वतंत्रता के समय भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था में भूमि-अधिकार अत्यधिक असमान थे। औपनिवेशिक काल से चली आ रही जमींदारी, मध्यस्थ भू-अधिकार और असुरक्षित काश्तकारी व्यवस्था ने वास्तविक कृषकों और भूमिहीन ग्रामीणों की स्थिति को कमजोर किया था। स्वतंत्रता के बाद लगभग सभी राज्यों ने मध्यस्थ भू-अधिकारों की समाप्ति, काश्तकारी सुधार और भूमि-सीमा निर्धारण जैसे भूमि-सुधार उपाय अपनाए। योजना आयोग ने भूमि-सुधार को कृषि व्यवस्था में अधिक समानता तथा सामाजिक न्याय स्थापित करने का प्रमुख साधन माना। भूमि-सुधार के अंतर्गत जमींदारी एवं अन्य मध्यस्थ व्यवस्थाओं को समाप्त करने की दिशा में महत्वपूर्ण कानूनी कदम उठाए गए। पंचम पंचवर्षीय योजना के अनुसार, 1954 तक लगभग सभी राज्यों में मध्यस्थ भू-अधिकारों को समाप्त करने के लिए आवश्यक कानून बनाए जा चुके थे तथा इनके परिणामस्वरूप लगभग 2 करोड़ काश्तकार राज्य के साथ सीधे संबंध में आए। इसके साथ ही काश्तकारी सुरक्षा, भूमि-सीमा और अतिरिक्त भूमि के वितरण की नीतियाँ अपनाई गईं। फिर भी भूमि-सुधार की प्रक्रिया पूर्णतः प्रभावी नहीं हो सकी। बारहवीं पंचवर्षीय योजना में उल्लेख किया गया कि लगभग 30 लाख हेक्टेयर भूमि अतिरिक्त (surplus) घोषित की गई थी, किंतु उसका लगभग 30 प्रतिशत हिस्सा मुकदमों में फँसा हुआ था और वितरित नहीं हो पाया था। यह स्थिति बताती है कि भूमि-सुधार केवल विधायी प्रावधानों का प्रश्न नहीं था, बल्कि उसके क्रियान्वयन पर स्थानीय सत्ता-संबंधों, भूमि-अभिलेखों और न्यायिक प्रक्रियाओं का भी प्रभाव था।

इसी व्यापक ग्रामीण असमानता और भूमि-संबंधी संघर्ष की पृष्ठभूमि में तेलंगाना कृषक संघर्ष (1948-51) महत्वपूर्ण था। जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के अभिलेखीय विवरण के अनुसार, यह आंदोलन दमनकारी जमींदारी व्यवस्था और तत्कालीन हैदराबाद के निजाम के निरंकुश शासन के विरुद्ध कृषकों का सशस्त्र विद्रोह था। इस क्षेत्र में किसानों पर विभिन्न प्रकार के करों तथा वेट्टी (बलात् श्रम) का भार था और लगभग 3,000 गाँवों में समानांतर प्रशासनिक व्यवस्थाएँ स्थापित होने का उल्लेख मिलता है। इसी संघर्षग्रस्त क्षेत्र में विनोबा भावे अप्रैल 1951 में अहिंसक सामाजिक परिवर्तन का संदेश लेकर पहुँचे। 18 अप्रैल 1951 को पोचमपल्ली में भूदान आंदोलन की ऐतिहासिक शुरुआत हुई। विनोबा भावे के अभिलेख के अनुसार पोचमपल्ली में लगभग 700 परिवार थे, जिनमें लगभग दो-तिहाई भूमिहीन बताए गए। वहाँ दलित परिवारों ने 80 एकड़ भूमि की आवश्यकता व्यक्त की। इसके बाद स्थानीय भूमिधर रामचंद्र रेड्डी ने 100 एकड़ भूमि दान करने की घोषणा की। इसी घटना को भूदान आंदोलन का प्रारंभिक बिंदु माना जाता है।

पोचमपल्ली की घटना के बाद स्वैच्छिक भूमि-दान का विचार स्थानीय पहल से निकलकर व्यापक सामाजिक आंदोलन में परिवर्तित हुआ। अक्टूबर 1951 तक विनोबा ने पूरे भारत से भूमिहीनों के लिए **5 करोड़ एकड़ भूमि** प्राप्त करने का लक्ष्य रखा था। आंदोलन आगे बढ़ते हुए केवल व्यक्तिगत भूमि-दान तक सीमित नहीं रहा, बल्कि **ग्रामदान** की अवधारणा विकसित हुई, जिसमें गाँव को सामुदायिक इकाई के रूप में संगठित करने और भूमि एवं सामाजिक संबंधों को सहयोग के आधार पर पुनर्गठित करने का प्रयास किया गया। विनोबा भावे के अभिलेख के अनुसार आंदोलन का प्रारंभिक उत्साह 1957 तक विशेष रूप से दिखाई दिया, जिसके बाद उसकी गति कम होने लगी। भूदान की वास्तविक उपलब्धियों को समझने के लिए दान और वितरण के आँकड़ों में अंतर करना आवश्यक है। भारत सरकार के एक आधिकारिक विवरण के अनुसार **39.16 लाख एकड़ भूमि भूदान के अंतर्गत दान में प्राप्त हुई थी, जिसमें से 21.75 लाख एकड़ भूमि ग्रामीण गरीबों में वितरित की गई तथा 17.41 लाख एकड़ भूमि वितरण से शेष थी।** इससे स्पष्ट होता है कि स्वैच्छिक भूमि-दान का विस्तार उल्लेखनीय था, लेकिन दान की गई भूमि को वास्तविक लाभार्थियों तक पहुँचाना एक अलग प्रशासनिक और कानूनी चुनौती थी। इस प्रकार भूदान एवं ग्रामदान आंदोलन की पृष्ठभूमि को स्वतंत्रता के बाद के भूमि-सुधार, तेलंगाना के कृषक संघर्ष, ग्रामीण सत्ता-असमानता और विनोबा भावे के अहिंसक सामाजिक परिवर्तन के प्रयासों के संयुक्त संदर्भ में समझा जा सकता है।

भूदान एवं ग्रामदान का राजनीतिक प्रभाव

भूदान एवं ग्रामदान आंदोलन का राजनीतिक महत्व इस तथ्य में निहित था कि इसने भूमि के प्रश्न को केवल आर्थिक पुनर्वितरण का विषय न मानकर **ग्रामीण सत्ता-संबंधों, सामाजिक न्याय और राजनीतिक सहभागिता** से जोड़ा। भारतीय ग्रामीण समाज में भूमि आर्थिक संसाधन होने के साथ-साथ सामाजिक प्रतिष्ठा और स्थानीय प्रभाव का भी महत्वपूर्ण आधार थी। इसलिए भूमि के स्वामित्व में परिवर्तन की पहल का संभावित प्रभाव ग्रामीण शक्ति-संतुलन पर भी पड़ना स्वाभाविक था। स्वतंत्रता के बाद राज्य की भूमि-सुधार नीति का उद्देश्य भी ग्रामीण सत्ता-संबंधों को अधिक न्यायपूर्ण बनाना था; पंचम पंचवर्षीय योजना ने भूमि-सुधार को सामाजिक अन्याय और शोषण समाप्त करने तथा ग्रामीण आबादी के विभिन्न वर्गों को समान अवसर देने से जोड़ा था।

भूदान आंदोलन ने इस उद्देश्य को **स्वैच्छिक एवं अहिंसक सामाजिक परिवर्तन** के माध्यम से आगे बढ़ाने का प्रयास किया। पोचमपल्ली में 100 एकड़ भूमि के स्वैच्छिक दान से प्रारंभ हुई पहल आगे चलकर राष्ट्रीय आंदोलन का रूप ले गई। भारत सरकार के उपलब्ध आँकड़ों के अनुसार 39.16 लाख एकड़ भूमि भूदान के अंतर्गत प्राप्त हुई, जबकि 21.75 लाख एकड़ वितरित की गई। इस अंतर से यह संकेत मिलता है कि भूमि के पुनर्वितरण की राजनीतिक प्रक्रिया केवल नैतिक सहमति प्राप्त करने तक सीमित नहीं थी; भूमि-अभिलेख, कानूनी स्वामित्व, प्रशासनिक प्रक्रिया और वास्तविक कब्जे का प्रश्न भी महत्वपूर्ण था।

भूमि और राजनीतिक शक्ति के संबंध को तमिलनाडु के आधिकारिक भूदान आँकड़ों से भी समझा जा सकता है। 31 मार्च 2021 तक वहाँ भूदान आंदोलन के अंतर्गत **28,049 एकड़ भूमि प्राप्त हुई थी, जिसमें से 20,522 एकड़ भूमि लाभार्थियों को वितरित की जा चुकी थी और 7,527 एकड़ भूमि मुकदमे, पंजीकरण अथवा अन्य प्रक्रियाओं के कारण लंबित थी।** अर्थात् उपलब्ध भूमि का लगभग 73.2 प्रतिशत भाग वितरित हो चुका था, जबकि लगभग 26.8 प्रतिशत विभिन्न प्रक्रियाओं में शेष था। यह उदाहरण दिखाता है कि स्वैच्छिक दान को वास्तविक भूमि-अधिकार में बदलने के लिए संस्थागत व्यवस्था आवश्यक थी। ग्रामीण **राजनीतिक सहभागिता** के

संदर्भ में ग्रामदान ने भूदान से अधिक व्यापक दृष्टिकोण प्रस्तुत किया। भूदान मुख्यतः भूमिहीन व्यक्तियों के लिए भूमि प्राप्त करने पर केंद्रित था, जबकि ग्रामदान ने गाँव को सामुदायिक इकाई के रूप में देखने और सामूहिक उत्तरदायित्व तथा सहयोग की भावना विकसित करने का प्रयास किया। इस दृष्टि से ग्रामदान को ग्रामीण समाज में निर्णय-प्रक्रिया को अधिक सहभागी बनाने के वैचारिक प्रयास के रूप में देखा जा सकता है। हालांकि उपलब्ध ऐतिहासिक स्रोतों से यह निष्कर्ष निकालना उचित नहीं होगा कि ग्रामदान ने पूरे भारत में स्थायी रूप से ग्रामसभा या स्थानीय लोकतांत्रिक संस्थाओं की शक्ति को बढ़ा दिया; इसका प्रभाव क्षेत्र और स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार अलग-अलग रहा।

भूदान एवं ग्रामदान का संबंध **विकेंद्रीकरण** की व्यापक अवधारणा से भी दिखाई देता है। स्वतंत्र भारत की प्रथम पंचवर्षीय योजना ने गाँव से ऊपर तक स्थानीय और क्षेत्रीय संगठनों की स्थापना तथा उनकी गतिविधियों के समन्वय पर बल दिया था। इस प्रकार राज्य की विकास-नीति में भी स्थानीय सहभागिता का विचार मौजूद था। विनोबा का ग्रामदान प्रयोग इसी व्यापक संदर्भ में राज्य-केंद्रित विकास के समानांतर समाज-केंद्रित ग्रामीण पुनर्गठन की दिशा में एक वैकल्पिक प्रयोग था। **राज्य और नागरिक समाज के संबंध** के स्तर पर भूदान आंदोलन की विशेषता यह थी कि इसकी मूल पहल राज्य द्वारा भूमि अधिग्रहण के बजाय सामाजिक नैतिकता और स्वैच्छिक सहयोग पर आधारित थी। बाद में विभिन्न राज्यों ने भूदान भूमि के प्रशासन और वितरण के लिए कानूनी व्यवस्थाएँ विकसित कीं। उदाहरण के लिए, तमिलनाडु में **तमिलनाडु भूदान योजना अधि., 1958** के माध्यम से दान में प्राप्त भूमि को विनियमित करने, उसका स्वामित्व भूदान बोर्ड के नाम करने तथा भूमिहीन गरीबों को वितरित करने की व्यवस्था की गई। इससे स्पष्ट होता है कि आंदोलन का प्रारंभ नागरिक समाज की स्वैच्छिक पहल से हुआ, लेकिन उसके स्थायी क्रियान्वयन के लिए राज्य की कानूनी एवं प्रशासनिक संस्थाओं की आवश्यकता पड़ी।

अंततः, भूदान एवं ग्रामदान की **अहिंसक राजनीतिक परिवर्तन की अवधारणा** तेलंगाना की हिंसक कृषक-राजनीति की पृष्ठभूमि में विशेष महत्व रखती है। 1948-51 के तेलंगाना संघर्ष में लगभग 3,000 गाँवों में समानांतर प्रशासनिक व्यवस्थाओं का उल्लेख मिलता है, जबकि विनोबा ने उसी क्षेत्र में भूमि-संबंधी तनाव का समाधान स्वैच्छिक दान और अहिंसक सामाजिक संवाद के माध्यम से खोजने का प्रयास किया। इसलिए भूदान को सत्ता पर प्रत्यक्ष कब्जे की राजनीतिक रणनीति के बजाय **सामाजिक सहमति, नैतिक persuasion और संसाधनों के स्वैच्छिक पुनर्वितरण के माध्यम से परिवर्तन लाने के प्रयोग** के रूप में समझना अधिक उपयुक्त है।

समग्रतः उपलब्ध आँकड़े यह दर्शाते हैं कि भूदान आंदोलन ने भूमि के पुनर्वितरण के प्रश्न को राष्ट्रीय राजनीतिक विमर्श में महत्वपूर्ण स्थान दिया और लाखों एकड़ भूमि दान के रूप में प्राप्त हुई। किंतु दान और वास्तविक वितरण के बीच का अंतर यह भी स्पष्ट करता है कि **नैतिक-सामाजिक पहल को स्थायी राजनीतिक एवं संस्थागत परिवर्तन में बदलने के लिए कानूनी, प्रशासनिक और स्थानीय संस्थागत व्यवस्थाएँ आवश्यक थीं।**

सामाजिक प्रभाव

भूदान एवं ग्रामदान आंदोलन का सामाजिक प्रभाव मुख्यतः भूमिहीन ग्रामीणों की स्थिति, सामाजिक-आर्थिक असमानता, जाति एवं वर्ग संबंधों तथा सामुदायिक सहयोग के संदर्भ में देखा गया। आंदोलन का मूल उद्देश्य केवल भूमि का हस्तांतरण नहीं था, बल्कि ग्रामीण समाज में संसाधनों की असमान पहुँच को कम करना और वंचित समूहों के सामाजिक जीवन में अधिक सम्मान एवं भागीदारी की संभावना उत्पन्न करना था।

1. भूमिहीनों की स्थिति

भूदान आंदोलन ने भूमिहीन ग्रामीणों को भूमि उपलब्ध कराने के प्रश्न को राष्ट्रीय सामाजिक विमर्श का महत्वपूर्ण विषय बनाया। भारत सरकार के उपलब्ध आँकड़ों के अनुसार, भूदान के अंतर्गत 39.16 लाख एकड़ भूमि दान में प्राप्त हुई, जिसमें से 21.75 लाख एकड़ भूमि ग्रामीण गरीबों में वितरित की गई थी। इससे स्पष्ट है कि आंदोलन ने बड़ी मात्रा में भूमि को भूमिहीनों तक पहुँचाने का प्रयास किया, यद्यपि दान और वास्तविक वितरण के बीच पर्याप्त अंतर बना रहा। 2013 में भारत सरकार द्वारा उपलब्ध कराई गई जानकारी के अनुसार, राज्यों/केंद्रशासित प्रदेशों द्वारा 16.66 लाख एकड़ भूदान भूमि पात्र ग्रामीण गरीबों को वितरित की जा चुकी थी। इसी स्रोत में यह भी स्पष्ट किया गया कि भारत की जनगणना में भूमिहीन कृषक परिवारों की पृथक गणना नहीं की जाती; कृषि श्रमिकों को भूमिहीन कृषकों का निकटतम सांख्यिकीय संकेतक माना जा सकता है। 1991 से 2011 के बीच कृषि श्रमिकों की संख्या 7.46 करोड़ से बढ़कर 14.43 करोड़ हुई थी।

इसलिए भूदान द्वारा भूमि-वितरण को भूमिहीनता की समस्या का पूर्ण समाधान मानना उचित नहीं होगा। उपलब्ध आँकड़े यह बताते हैं कि आंदोलन ने कुछ ग्रामीण परिवारों को भूमि उपलब्ध कराई, लेकिन देश में भूमिहीन श्रम और कृषि-निर्भरता की व्यापक समस्या बनी रही।

2. सामाजिक एवं आर्थिक असमानता

भूमि ग्रामीण समाज में आय, उत्पादन, सामाजिक प्रतिष्ठा और स्थानीय प्रभाव का महत्वपूर्ण आधार रही है। इसलिए भूमि के पुनर्वितरण की पहल सामाजिक एवं आर्थिक असमानता को प्रभावित करने की क्षमता रखती थी। भूदान आंदोलन ने बड़े भू-स्वामियों से स्वैच्छिक रूप से भूमि प्राप्त करके उसे भूमिहीन ग्रामीणों तक पहुँचाने का प्रयास किया। इस अर्थ में यह राज्य द्वारा लागू भूमि-सुधार कानूनों के समानांतर एक सामाजिक पुनर्वितरण प्रयोग था। हालाँकि, उपलब्ध आँकड़े यह भी दर्शाते हैं कि भूमि प्राप्त करना और उसका वास्तविक लाभार्थियों तक पहुँचना दो अलग प्रक्रियाएँ थीं। 39.16 लाख एकड़ प्राप्त भूमि में से 21.75 लाख एकड़ के वितरण का सरकारी आँकड़ा इस अंतर को स्पष्ट करता है। इसके अतिरिक्त, समकालीन विश्लेषणों में दान की गई भूमि के एक हिस्से के विवादित, अनुपजाऊ अथवा कानूनी प्रक्रिया में फँसे होने की समस्या का उल्लेख मिलता है।

अतः भूदान का सामाजिक प्रभाव असमानता को समाप्त करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण प्रयास के रूप में देखा जा सकता है, लेकिन उपलब्ध प्रमाण इसके द्वारा ग्रामीण आर्थिक असमानता के पूर्ण और स्थायी उन्मूलन का निष्कर्ष प्रस्तुत नहीं करते।

3. जाति एवं वर्ग संबंध

भारतीय ग्रामीण समाज में भूमि-संबंध आर्थिक वर्ग और सामाजिक जाति-संबंधों से परस्पर जुड़े रहे हैं। इस कारण भूमिहीनता का प्रभाव केवल आर्थिक नहीं था, बल्कि इसका संबंध सामाजिक प्रतिष्ठा, निर्भरता और स्थानीय शक्ति से भी था। भूदान आंदोलन ने भूमिहीन और सामाजिक रूप से वंचित समूहों को भूमि उपलब्ध कराने का प्रयास करके इन संबंधों को प्रभावित करने की संभावना उत्पन्न की। भूदान आंदोलन से संबंधित साहित्य में यह उल्लेख मिलता है कि वितरित भूमि का एक महत्वपूर्ण हिस्सा

अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और अन्य पिछड़े वर्गों से संबंधित जरूरतमंद लोगों तक पहुँचा। हालांकि इस संबंध में उपलब्ध स्रोतों के आँकड़े एकरूप नहीं हैं, इसलिए इसे अखिल भारतीय स्तर पर निश्चित प्रतिशत के रूप में प्रस्तुत करना उचित नहीं है।

राज्य-स्तरीय अभिलेख इस प्रक्रिया का अधिक ठोस उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। असम सरकार के उपलब्ध भूदान अभिलेखों में नौ जिलों के लिए 209 दाताओं और 855 लाभार्थियों का विवरण दर्ज है तथा अभिलेख में स्पष्ट किया गया है कि प्राप्त भूमि भूमिहीन लोगों में वितरित की गई। इससे यह स्पष्ट होता है कि भूदान का प्रभाव केवल वैचारिक स्तर पर नहीं था, बल्कि कुछ क्षेत्रों में भूमि के वास्तविक हस्तांतरण और लाभार्थी-निर्माण के रूप में भी सामने आया।

4. सामुदायिक सहयोग और सामाजिक चेतना

भूदान आंदोलन की विशिष्टता उसकी स्वैच्छिक प्रकृति में थी। भूमि प्राप्त करने के लिए राज्य द्वारा अनिवार्य अधिग्रहण के स्थान पर दान, नैतिक अपील और सामाजिक सहयोग को माध्यम बनाया गया। इससे भूमि-असमानता को केवल आर्थिक समस्या न मानकर सामाजिक उत्तरदायित्व के प्रश्न के रूप में प्रस्तुत किया गया। ग्रामदान ने इस विचार को और व्यापक बनाते हुए व्यक्तिगत भूमि-दान से आगे ग्राम-समुदाय की सामूहिक जिम्मेदारी पर बल दिया। इस प्रकार आंदोलन ने ग्रामीण समाज में सहयोग, त्याग और सामुदायिक उत्तरदायित्व की चेतना विकसित करने का प्रयास किया। हालांकि ग्रामदान की अवधारणा के सामाजिक प्रभाव को पूरे देश के लिए समान रूप से सिद्ध करने वाले तुलनीय सांख्यिकीय आँकड़े उपलब्ध नहीं हैं; इसलिए इसका प्रभाव मुख्यतः ऐतिहासिक अभिलेखों और क्षेत्रीय अध्ययनों के आधार पर समझा जाना चाहिए।

5. कमजोर वर्गों के सामाजिक सशक्तीकरण का प्रश्न

भूदान आंदोलन का एक महत्वपूर्ण सामाजिक पक्ष यह था कि भूमि को केवल उत्पादन के साधन के रूप में नहीं, बल्कि सामाजिक सुरक्षा और आत्मनिर्भरता के आधार के रूप में देखा गया। भूमि प्राप्त होने से भूमिहीन परिवारों के लिए कृषि-आधारित आजीविका, सामाजिक प्रतिष्ठा और स्थानीय संसाधनों तक पहुँच की संभावना बढ़ सकती थी। इसी कारण भूदान का उद्देश्य सामाजिक रूप से कमजोर वर्गों को केवल आर्थिक सहायता देना नहीं, बल्कि उन्हें ग्रामीण समाज में अधिक स्वायत्त स्थिति प्रदान करना भी था। फिर भी सशक्तीकरण को केवल भूमि के वितरण से स्वतः सिद्ध नहीं किया जा सकता। तमिलनाडु के आधिकारिक आँकड़े इसका एक महत्वपूर्ण उदाहरण देते हैं। 31 मार्च 2021 तक वहाँ 28,049 एकड़ भूमि भूदान के अंतर्गत प्राप्त, 20,522 एकड़ वितरित और 7,527 एकड़ भूमि मुकदमे, पंजीकरण, पुष्टि आदि प्रक्रियाओं में लंबित थी। इससे स्पष्ट होता है कि भूमि का सामाजिक सशक्तीकरण में वास्तविक योगदान तभी संभव था जब लाभार्थी को वैध अधिकार, कब्जा और उपयोग की स्थायी सुरक्षा भी प्राप्त हो।

समग्र सामाजिक प्रभाव

समग्रतः अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि भूदान एवं ग्रामदान आंदोलन ने भूमिहीनता, सामाजिक-आर्थिक असमानता और ग्रामीण वंचना के प्रश्नों को सामाजिक न्याय के व्यापक विमर्श से जोड़ा। आंदोलन के माध्यम से लाखों एकड़ भूमि दान में प्राप्त हुई और उसका एक बड़ा हिस्सा ग्रामीण गरीबों में वितरित भी किया गया। किंतु

दान की गई भूमि और वास्तविक रूप से वितरित अथवा कानूनी रूप से सुरक्षित भूमि के बीच अंतर, भूमि-विवाद तथा प्रशासनिक प्रक्रियाओं ने इसके सामाजिक प्रभाव को सीमित किया। इसलिए भूदान एवं ग्रामदान को ग्रामीण समाज में सामाजिक परिवर्तन और कमजोर वर्गों के सशक्तीकरण का महत्वपूर्ण प्रयास माना जा सकता है, लेकिन इसे ग्रामीण असमानताओं के पूर्ण समाधान के रूप में प्रस्तुत करना उपलब्ध प्रमाणों से समर्थित नहीं होगा।

आँकड़ों का विश्लेषण

भूदान एवं ग्रामदान आंदोलन के प्रभाव का वस्तुनिष्ठ अध्ययन करने के लिए उपलब्ध सरकारी अभिलेखों, राज्य स्तरीय भूदान बोर्डों तथा समकालीन प्रकाशनों में दर्ज आँकड़ों का तुलनात्मक परीक्षण किया गया। इस विश्लेषण में विशेष रूप से प्राप्त/दान की गई भूमि और वितरित भूमि के बीच अंतर को आधार बनाया गया है।

1. भूदान भूमि : प्राप्ति और वितरण

भारत सरकार के भूमि-सुधार संबंधी आधिकारिक विवरण के अनुसार, भूदान आंदोलन के अंतर्गत कुल 39.16 लाख एकड़ भूमि दान में प्राप्त हुई थी। इसमें से 21.75 लाख एकड़ भूमि ग्रामीण गरीबों में वितरित की गई, जबकि 17.41 लाख एकड़ भूमि उस समय तक वितरित नहीं हुई थी। इस प्रकार प्राप्त भूमि का लगभग 55.5 प्रतिशत हिस्सा वितरित हुआ और लगभग 44.5 प्रतिशत वितरण से शेष रहा।

तालिका - 1 : भारत सरकार के भूमि-सुधार संबंधी आधिकारिक विवरण

क्र.सं.	सूचक	भूमि की मात्रा	प्राप्त/दान भूमि के अनुपात में
1.	भूदान के अंतर्गत प्राप्त भूमि	39.16 लाख एकड़	100%
2.	ग्रामीण गरीबों को वितरित भूमि	21.75 लाख एकड़	लगभग 55.5%
3.	वितरण से शेष भूमि	17.41 लाख एकड़	लगभग 44.5%

स्रोत: भारत सरकार, भूमि-सुधार संबंधी आधिकारिक विवरण। प्रतिशत की गणना उपलब्ध मूल आँकड़ों से की गई है।

यह आँकड़ा आंदोलन की उपलब्धि और उसकी सीमा दोनों को एक साथ सामने रखता है। 39.16 लाख एकड़ भूमि का दान स्वयं में व्यापक सामाजिक लामबंदी को दर्शाता है, लेकिन दान और वितरण के बीच लगभग 17.41 लाख एकड़ का अंतर यह बताता है कि भूमि प्राप्त कर लेना और उसे कानूनी एवं प्रशासनिक रूप से लाभार्थियों तक पहुँचाना अलग-अलग प्रक्रियाएँ थीं। एक अन्य सरकारी उत्तर में 30 सितंबर 2013 तक राज्यों/केंद्रशासित प्रदेशों द्वारा 16.66 लाख एकड़ भूदान भूमि पात्र ग्रामीण गरीबों को वितरित किए जाने की सूचना दी गई थी। इससे यह भी स्पष्ट होता है कि अलग-अलग सरकारी स्रोतों में आँकड़े स्रोत-वर्ष और रिपोर्टिंग की स्थिति के अनुसार भिन्न हो सकते हैं। इसलिए इन संख्याओं को बिना वर्ष बताए एक-दूसरे के स्थान पर प्रयोग करना उचित नहीं है।

2. ग्रामदान का विस्तार

ग्रामदान के विस्तार को समझने के लिए 15 नवंबर 1966 तक प्रकाशित सरकारी प्रकाशन योजना में उपलब्ध राज्यवार आँकड़े महत्वपूर्ण हैं। इसमें कुल 29,474 ग्रामदान और 83 प्रखंडदान दर्ज किए गए

थे। बिहार में 10,966, उड़ीसा में 5,241, महाराष्ट्र में 2,259, आंध्र में 2,152 और तत्कालीन मद्रास में 1,867 ग्रामदान दर्ज थे -

तालिका - 2 : 15 नवंबर 1966 तक प्रकाशित सरकारी प्रकाशन योजना में उपलब्ध राज्यवार आँकड़े

क्र.सं.	राज्य/क्षेत्र	ग्रामदानों की संख्या (15 नवम्बर 1966 तक)	क्र.सं.	राज्य/क्षेत्र	ग्रामदानों की संख्या (15 नवम्बर 1966 तक)
1.	बिहार	10,966	9.	मद्रास	1,867
2.	उड़ीसा	5,241	10.	मध्य प्रदेश	1,805
3.	महाराष्ट्र	2,259	11.	असम	1,341
4.	आंध्र	2,152	12.	राजस्थान	940
5.	पश्चिम बंगाल	342	13.	हरियाणा	381
6.	हिमाचल प्रदेश	437	14.	उत्तर प्रदेश	409
7.	केरल	409	15.	गुजरात	493
8.	पंजाब	144	16.	मैसूर	58

स्रोत: भारत सरकार, पब्लिकेशन डिविजन, योजना, जनवरी 1967।

इन आँकड़ों से स्पष्ट होता है कि ग्रामदान का प्रसार पूरे देश में समान नहीं था। बिहार और उड़ीसा में इसकी संख्या विशेष रूप से अधिक थी, जबकि कुछ राज्यों में यह सीमित रहा। अतः ग्रामदान को अखिल भारतीय स्तर पर समान प्रभाव वाला ग्रामीण पुनर्गठन कार्यक्रम मानना उपलब्ध आँकड़ों से उचित नहीं होगा। इसके अतिरिक्त, दिल्ली की 1971 जनगणना संबंधी प्रशासनिक तालिका में 31 मार्च 1970 तक दिल्ली में 58 ग्रामदान गाँव दर्ज किए गए थे तथा ग्रामसमिति के नियंत्रण में 301 एकड़ भूमि का उल्लेख मिलता है। यह उदाहरण दिखाता है कि ग्रामदान की वास्तविक स्थिति समझने के लिए राज्य और क्षेत्र-विशिष्ट प्रशासनिक अभिलेख महत्वपूर्ण हैं।

3. राज्य-स्तरीय उदाहरण : तमिलनाडु

तमिलनाडु का आधिकारिक भूदान बोर्ड उपलब्ध आँकड़ों के कारण विशेष रूप से उपयोगी उदाहरण प्रस्तुत करता है। 31 मार्च 2021 तक वहाँ 28,049 एकड़ भूमि भूदान के अंतर्गत प्राप्त हुई थी, जिसमें से 20,522 एकड़ भूमि लाभार्थियों को वितरित की गई तथा 7,527 एकड़ भूमि मुकदमे, पंजीकरण, पुष्टि आदि प्रक्रियाओं में शेष थी।

तालिका - 3 : तमिलनाडु का आधिकारिक भूदान बोर्ड द्वारा उपलब्ध आँकड़ें

क्र.सं.	तमिलनाडु में स्थिति (31 मार्च 2021)	क्षेत्रफल
1.	प्राप्त/दान भूमि	28,049 एकड़
2.	लाभार्थियों को वितरित	20,522 एकड़
3.	मुकदमे/पंजीकरण/पुष्टि आदि में शेष	7,527 एकड़

स्रोत: Tamil Nadu Land Reforms Department, Bhoodan Board.

यहाँ भी प्राप्त भूमि और वितरित भूमि के बीच लगभग 7,527 एकड़ का अंतर मौजूद है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि भूदान आंदोलन की प्रभावशीलता का मूल्यांकन केवल दान की मात्रा से नहीं, बल्कि भूमि के वैध हस्तांतरण और लाभार्थियों तक वास्तविक पहुँच के आधार पर किया जाना चाहिए।

4. आँकड़ों से प्राप्त प्रमुख निष्कर्ष

उपलब्ध आँकड़ों के तुलनात्मक अध्ययन से तीन प्रमुख तथ्य सामने आते हैं। प्रथम, भूदान आंदोलन ने बड़े पैमाने पर भूमि-दान को सामाजिक एवं राजनीतिक अभियान का रूप दिया। द्वितीय, दान की गई भूमि का पूरा भाग लाभार्थियों को वितरित नहीं हो सका। तृतीय, ग्रामदान का विस्तार क्षेत्रीय रूप से असमान रहा। इसलिए आंदोलन का मूल्यांकन केवल प्राप्त भूमि या घोषित ग्रामदानों की संख्या से करना पर्याप्त नहीं है; **भूमि का कानूनी हस्तांतरण, वास्तविक वितरण, लाभार्थियों का अधिकार और ग्रामदान संस्थाओं की दीर्घकालीन सक्रियता** भी समान रूप से महत्वपूर्ण संकेतक हैं। भूमि-अभिलेखों और स्वामित्व से संबंधित सामान्य प्रशासनिक समस्याएँ भी इस प्रक्रिया को प्रभावित कर सकती थीं। **नीति आयोग** ने भारतीय भूमि-व्यवस्था में स्वामित्व अभिलेखों की अपूर्णता, पुराने रिकॉर्ड, स्वामित्व विवाद और न्यायिक चुनौतियों को व्यापक भूमि-प्रशासन की समस्याओं के रूप में रेखांकित किया है।

अतः उपलब्ध वास्तविक आँकड़े भूदान एवं ग्रामदान आंदोलन को न तो पूर्णतः असफल और न ही पूर्णतः सफल सिद्ध करते हैं। वे यह दर्शाते हैं कि आंदोलन ने भूमि-पुनर्वितरण की दिशा में उल्लेखनीय सामाजिक पहल की, लेकिन दान से वितरण और वितरण से स्थायी भूमि-अधिकार तक की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण संस्थागत बाधाएँ मौजूद रहीं।

उपलब्धियाँ

भूदान एवं ग्रामदान आंदोलन की पहली महत्वपूर्ण उपलब्धि यह रही कि उसने स्वतंत्रता के बाद भूमि-असमानता के प्रश्न को व्यापक **राष्ट्रीय सामाजिक एवं राजनीतिक विमर्श** का विषय बनाया। राज्य भूमि-सुधार कानूनों के माध्यम से भूमि-संबंधों में परिवर्तन का प्रयास कर रहा था, जबकि भूदान आंदोलन ने इसी प्रश्न को स्वैच्छिक दान, सामाजिक उत्तरदायित्व और अहिंसक परिवर्तन के माध्यम से उठाया। दूसरी महत्वपूर्ण उपलब्धि **भूमि का वास्तविक संग्रह और वितरण** था। भारत सरकार के अनुसार 39.16 लाख एकड़ भूमि भूदान के अंतर्गत दान में प्राप्त हुई और 21.75 लाख एकड़ ग्रामीण गरीबों में वितरित की गई। यह आँकड़ा बताता है कि आंदोलन केवल वैचारिक अभियान नहीं था, बल्कि इसके माध्यम से वास्तविक भूमि हस्तांतरण की प्रक्रिया भी हुई। तीसरी उपलब्धि **ग्रामदान की अवधारणा का विकास** थी। 15 नवंबर 1966 तक उपलब्ध *योजना* के आँकड़ों में 29,474 ग्रामदान दर्ज किए गए थे। इससे पता चलता है कि आंदोलन भूदान से आगे बढ़कर गाँव को सामुदायिक संगठन और सहयोग की इकाई बनाने के प्रयास तक पहुँचा। चौथी उपलब्धि ग्रामीण समाज में **सहयोग, सामाजिक उत्तरदायित्व और सहभागी ग्रामीण पुनर्गठन** की वैकल्पिक अवधारणा को विकसित करना थी। ग्रामदान के माध्यम से भूमि और ग्रामीण संसाधनों को केवल व्यक्तिगत स्वामित्व के प्रश्न के रूप में न देखकर सामुदायिक उत्तरदायित्व से जोड़ने का प्रयास किया गया।

सीमाएँ

आंदोलन की सबसे महत्वपूर्ण सीमा दान की गई भूमि और वास्तव में वितरित भूमि के बीच अंतर थी। उपलब्ध केंद्रीय सरकारी आँकड़ों में 39.16 लाख एकड़ प्राप्त भूमि के मुकाबले 21.75 लाख एकड़ वितरण दर्ज है। इसी प्रकार तमिलनाडु में 2021 तक 28,049 एकड़ प्राप्त भूमि में से 20,522 एकड़ वितरित हुई और 7,527 एकड़ मुकदमे, पंजीकरण एवं अन्य प्रक्रियाओं में शेष थी।

दूसरी सीमा कानूनी एवं प्रशासनिक जटिलता थी। भूमि का दान घोषित होना अपने आप में वैध और निर्विवाद स्वामित्व हस्तांतरण की गारंटी नहीं था। भूमि-अभिलेख, पंजीकरण, स्वामित्व विवाद और न्यायिक प्रक्रिया जैसी समस्याएँ वितरण की गति को प्रभावित करती थीं। *नीति आयोग* के भूमि-प्रशासन संबंधी विश्लेषण में भी भारत में भूमि-स्वामित्व के अभिलेखों की अपूर्णता और स्वामित्व-विवादों को महत्वपूर्ण संरचनात्मक समस्या माना गया है। तीसरी सीमा ग्रामदान की दीर्घकालीन संस्थागत स्थिरता से संबंधित थी। 1966 के उपलब्ध आँकड़े आंदोलन के व्यापक विस्तार को दिखाते हैं, लेकिन केवल ग्रामदान घोषित हो जाना यह प्रमाणित नहीं करता कि प्रत्येक गाँव में सामुदायिक स्वामित्व और सहभागी संस्थाएँ दीर्घकाल तक प्रभावी रूप से कार्य करती रहीं। इसीलिए ग्रामदान की संख्या को उसके वास्तविक सामाजिक-राजनीतिक प्रभाव का प्रत्यक्ष पर्याय नहीं माना जा सकता। चौथी सीमा राज्यवार असमानता थी। 1966 के आँकड़ों में बिहार में 10,966 और उड़ीसा में 5,241 ग्रामदान दर्ज थे, जबकि उत्तर प्रदेश में 409 और पंजाब में 144। इससे आंदोलन के विस्तार में क्षेत्रीय परिस्थितियों, स्थानीय सामाजिक संरचना और संगठनात्मक क्षमता के महत्व का संकेत मिलता है।

समग्र मूल्यांकन

इस प्रकार उपलब्ध प्रमाणों के आधार पर भूदान एवं ग्रामदान आंदोलन की सबसे स्पष्ट उपलब्धि भूमि-असमानता को सार्वजनिक विमर्श में लाना और स्वैच्छिक पुनर्वितरण के माध्यम से वास्तविक भूमि उपलब्ध कराना रही। वहीं इसकी प्रमुख सीमा यह रही कि दान को स्थायी एवं सुरक्षित भूमि-अधिकार में बदलने की प्रक्रिया कानूनी, प्रशासनिक और स्थानीय परिस्थितियों पर निर्भर रही। इसलिए आंदोलन का ऐतिहासिक मूल्य केवल वितरित भूमि की मात्रा में नहीं, बल्कि ग्रामीण सामाजिक न्याय, सामुदायिक सहयोग और अहिंसक सामाजिक परिवर्तन की वैकल्पिक राजनीतिक अवधारणा में भी देखा जाना चाहिए।

प्रमुख निष्कर्ष एवं सुझाव

अध्ययन में प्राथमिक एवं द्वितीयक स्रोतों, सरकारी अभिलेखों तथा उपलब्ध भूमि-वितरण संबंधी आँकड़ों के तुलनात्मक विश्लेषण से यह स्पष्ट हुआ कि भूदान एवं ग्रामदान आंदोलन ने भूमि के प्रश्न को केवल आर्थिक समस्या के रूप में नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय, ग्रामीण सत्ता-संबंधों और सामुदायिक सहभागिता के प्रश्न के रूप में प्रस्तुत किया। भारत सरकार के अनुसार भूदान के अंतर्गत 39.16 लाख एकड़ भूमि प्राप्त हुई, जिसमें से 21.75 लाख एकड़ भूमि ग्रामीण गरीबों को वितरित की गई, जबकि 17.41 लाख एकड़ वितरण से शेष रही। इससे आंदोलन की वास्तविक भूमि-वितरण उपलब्धि के साथ-साथ उसके क्रियान्वयन की सीमा भी स्पष्ट होती है। अध्ययन से यह भी पाया गया कि ग्रामदान का विस्तार उल्लेखनीय था, किंतु उसका क्षेत्रीय वितरण समान नहीं था। 15 नवंबर 1966 तक उपलब्ध सरकारी योजना के आँकड़ों में 29,474 ग्रामदान दर्ज थे; इनमें बिहार में

10,966 तथा उड़ीसा में 5,241 ग्रामदान थे, जबकि उत्तर प्रदेश में 409 दर्ज किए गए। इससे संकेत मिलता है कि ग्रामदान की सामाजिक-राजनीतिक स्वीकृति स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार भिन्न रही।

राजनीतिक दृष्टि से आंदोलन ने भूमि और ग्रामीण शक्ति के संबंध को प्रभावित करने का प्रयास किया। भूमिहीनों को भूमि उपलब्ध कराने की पहल ने ग्रामीण संसाधनों तक पहुँच के प्रश्न को उठाया, जबकि ग्रामदान ने सामुदायिक सहयोग और स्थानीय सहभागिता की वैकल्पिक अवधारणा प्रस्तुत की। हालांकि उपलब्ध आँकड़े यह प्रमाणित नहीं करते कि पूरे भारत में इससे ग्रामीण सत्ता-संबंधों का स्थायी पुनर्गठन हो गया। अतः अध्ययन की परिकल्पना—कि आंदोलन ने ग्रामीण सत्ता-संबंधों एवं सामाजिक संरचना को प्रभावित किया, किंतु उसका प्रभाव व्यापक और स्थायी नहीं हो सका—उपलब्ध प्रमाणों के साथ अधिक संगत दिखाई देती है।

सामाजिक स्तर पर भूदान ने भूमिहीन और ग्रामीण गरीबों को भूमि उपलब्ध कराने के प्रश्न को राष्ट्रीय महत्व प्रदान किया। 2013 के भारत सरकार के आँकड़ों के अनुसार राज्यों/केंद्रशासित प्रदेशों द्वारा **16.66 लाख एकड़ भूदान भूमि** पात्र ग्रामीण गरीबों को वितरित की गई थी। उसी सरकारी उत्तर में यह भी स्पष्ट किया गया कि जनगणना में भूमिहीन कृषक परिवारों की पृथक गणना नहीं होती और कृषि श्रमिकों को इसका निकटतम सांख्यिकीय संकेतक माना जा सकता है। इसलिए भूदान को भूमिहीनता की समस्या का पूर्ण समाधान मानने के बजाय सामाजिक न्याय की दिशा में एक महत्वपूर्ण, किंतु सीमित, हस्तक्षेप के रूप में समझना अधिक उचित है।

सुझाव

1. **भूदान भूमि के अभिलेखों का संरक्षण एवं डिजिटलीकरण** किया जाना चाहिए, ताकि दान, स्वामित्व, पंजीकरण और वितरण की स्थिति स्पष्ट रूप से निर्धारित की जा सके।
2. **प्राप्त भूमि और वास्तविक वितरण का नियमित सत्यापन** किया जाना चाहिए तथा लंबित भूमि के संबंध में राज्यवार सार्वजनिक प्रगति विवरण उपलब्ध कराया जाना चाहिए। भारत सरकार स्वयं शेष भूदान भूमि के वितरण के लिए राज्यों को विशेष प्रयास करने की आवश्यकता बता चुकी है।
3. **भूमि-विवादों के शीघ्र निपटारे** तथा लाभार्थियों को वैध एवं सुरक्षित भूमि-अधिकार उपलब्ध कराने की व्यवस्था मजबूत की जानी चाहिए।
4. **ग्राम-स्तरीय सहभागिता** को बढ़ावा देते हुए भूमि-वितरण और सामुदायिक संसाधनों से संबंधित निर्णयों में स्थानीय संस्थाओं की भूमिका सुनिश्चित की जानी चाहिए।
5. भूदान एवं ग्रामदान के ऐतिहासिक अनुभवों को वर्तमान **विकेंद्रीकरण, स्थानीय लोकतंत्र और भूमि-अभिलेख सुधार** की नीतियों के अध्ययन में उपयोग किया जा सकता है।

इस प्रकार अध्ययन का निष्कर्ष यह है कि भूदान एवं ग्रामदान आंदोलन ने ग्रामीण सत्ता और सामाजिक संबंधों में परिवर्तन की दिशा में महत्वपूर्ण वैचारिक तथा व्यावहारिक पहल की, लेकिन उसके प्रभाव को स्थायी और व्यापक बनाने में भूमि-अभिलेख, कानूनी अधिकार, प्रशासनिक क्रियान्वयन और स्थानीय संस्थागत क्षमता जैसी परिस्थितियाँ निर्णायक रहीं।

निष्कर्ष

भूदान एवं ग्रामदान आंदोलन स्वतंत्रता के बाद भारत में भूमि-असमानता, सामाजिक न्याय और ग्रामीण पुनर्गठन के प्रश्नों से जुड़ा एक महत्वपूर्ण अहिंसक सामाजिक-राजनीतिक प्रयोग था। इस अध्ययन का उद्देश्य

आंदोलन की राजनीतिक-सामाजिक भूमिका, ग्रामीण सत्ता-संबंधों एवं सामाजिक न्याय पर उसके प्रभाव तथा उसकी उपलब्धियों और सीमाओं का तथ्यात्मक विश्लेषण करना था। उपलब्ध प्रमाणों के आधार पर कहा जा सकता है कि आंदोलन ने भूमि के प्रश्न को व्यापक सामाजिक और राजनीतिक विमर्श से जोड़ा तथा स्वैच्छिक भूमि-वितरण के माध्यम से राज्य-आधारित भूमि-सुधार के समानांतर एक वैकल्पिक मार्ग प्रस्तुत किया। भूदान के अंतर्गत प्राप्त 39.16 लाख एकड़ और वितरित 21.75 लाख एकड़ भूमि का सरकारी आँकड़ा आंदोलन की वास्तविक पहुँच को दर्शाता है, लेकिन साथ ही लगभग 17.41 लाख एकड़ के वितरण-अंतर से इसकी व्यावहारिक सीमा भी स्पष्ट होती है। इसी प्रकार ग्रामदान के 29,474 गाँवों के 1966 के आँकड़े इसके व्यापक विस्तार को प्रमाणित करते हैं, लेकिन राज्यवार असमानता यह बताती है कि आंदोलन का प्रभाव पूरे देश में समान नहीं था।

मुख्य शोध प्रश्न—**क्या स्वैच्छिक भूमि-वितरण ग्रामीण सत्ता एवं सामाजिक संबंधों में स्थायी परिवर्तन ला सका?**—के संदर्भ में अध्ययन का निष्कर्ष संतुलित है। भूदान ने भूमिहीनों और ग्रामीण गरीबों के लिए भूमि उपलब्ध कराने, भूमि-असमानता के प्रश्न को सामने लाने तथा सामाजिक सहयोग की भावना विकसित करने में योगदान दिया। ग्रामदान ने इससे आगे बढ़कर सामुदायिक उत्तरदायित्व, सहयोग और स्थानीय सहभागिता की अवधारणा को विकसित किया। किंतु उपलब्ध भूमि-वितरण आँकड़े यह भी दिखाते हैं कि दान की गई भूमि का पूरा भाग वास्तविक लाभार्थियों तक नहीं पहुँच सका। इसलिए आंदोलन को ग्रामीण सत्ता-संबंधों के **व्यापक और स्थायी पुनर्गठन** के रूप में देखना उपलब्ध प्रमाणों से समर्थित नहीं है।

प्रस्तुत अध्ययन की परिकल्पना—**“भूदान एवं ग्रामदान आंदोलन ने ग्रामीण सत्ता-संबंधों एवं सामाजिक संरचना में परिवर्तन को प्रभावित किया, किंतु उसका प्रभाव व्यापक और स्थायी नहीं हो सका”**—उपलब्ध ऐतिहासिक एवं सांख्यिकीय प्रमाणों के समग्र परीक्षण के बाद अधिक संगत प्रतीत होती है। आंदोलन का प्रभाव केवल वितरित भूमि की मात्रा से निर्धारित नहीं होता; उसकी वैचारिक विरासत, सामाजिक चेतना, सामुदायिक सहयोग और ग्रामीण लोकतंत्र की अवधारणा भी उसके ऐतिहासिक महत्व का हिस्सा हैं।

अतः भूदान एवं ग्रामदान को न तो केवल भूमि-वितरण की योजना के रूप में और न ही ग्रामीण असमानता के पूर्ण समाधान के रूप में समझना उचित है। इसका महत्व इस बात में निहित है कि इसने **भूमि, सामाजिक न्याय, सत्ता, समुदाय और लोकतांत्रिक सहभागिता** को एक-दूसरे से जोड़ते हुए अहिंसक सामाजिक परिवर्तन का एक विशिष्ट भारतीय प्रयोग प्रस्तुत किया। इसकी व्यावहारिक सीमाएँ यह संकेत देती हैं कि नैतिक अपील और स्वैच्छिक सहयोग को स्थायी सामाजिक परिवर्तन में बदलने के लिए प्रभावी भूमि-अभिलेख, कानूनी अधिकार, प्रशासनिक व्यवस्था और स्थानीय लोकतांत्रिक संस्थाओं का मजबूत होना आवश्यक है।

इस दृष्टि से भूदान एवं ग्रामदान आंदोलन भारतीय राजनीतिक चिंतन में एक ऐसे प्रयोग के रूप में महत्वपूर्ण है, जिसने **राज्य की विधायी शक्ति के साथ समाज की नैतिक एवं सामुदायिक शक्ति** को जोड़कर ग्रामीण परिवर्तन की संभावना तलाशने का प्रयास किया। यही इसकी प्रमुख ऐतिहासिक उपलब्धि और साथ ही इसकी व्यावहारिक सीमा दोनों को समझने की आधारभूमि प्रदान करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. ओमेन, टी. के. (1972). *भारत में भूदान-ग्रामदान आंदोलन: करिश्मा, स्थायित्व और परिवर्तन का विश्लेषण*। थॉम्पसन प्रेस (इंडिया), नई दिल्ली।

2. तंडन, विश्वनाथ. (1992). *आचार्य विनोबा भावे* प्रकाशन प्रभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।
3. नानेकर, के. आर., एवं खांडेवाले, एस. वी. (1973). *भूदान और भूमिहीन*। पॉपुलर प्रकाशन, मुम्बई।
4. सचिदानंद. (1961). *सर्वोदय एक साम्यवादी राज्य में: केरल के ग्रामदान आंदोलन का सामाजिक-आर्थिक अध्ययन*, पॉपुलर बुक डिपो, मुम्बई।
5. भगत-गांगुली, वर्षा. (2016). *भारत में भूमि अधिकार: नीतियाँ, आंदोलन और चुनौतियाँ*, रूटलेज इंडिया, नई दिल्ली।
6. भारत सरकार, ग्रामीण विकास मंत्रालय. (2005). *देश में भूमि सुधारों की गति में तेजी लाना*, भारत सरकार, नई दिल्ली।
7. भारत सरकार, कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय. (2013). *भूमिहीन किसानों को भूमि का वितरण*, प्रेस सूचना ब्यूरो, भारत सरकार, नई दिल्ली।
8. प्रकाशन प्रभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार. (1967). *योजना: ग्रामदान आंदोलन संबंधी राज्यवार विवरण*, भारत सरकार, नई दिल्ली।
9. प्रकाशन प्रभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार. (1961). *योजना: ग्रामदान और ग्राम-समुदाय संबंधी विचार एवं प्रगति*, भारत सरकार, नई दिल्ली।
10. प्रकाशन प्रभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार. (1963). *योजना: ग्रामदान आंदोलन की प्रगति*, भारत सरकार, नई दिल्ली।



EARN YOUR

MBA

WWW.IIMPS.IN



Accreditation & Ranking



UGC / NCTE Approved.

INFO@IIMPS.IN

☎ 011-41005174

RESEARCH
GATEWAY

STOP PLAGIARISM



Arogyam Ayurveda
Holistic Healing through herbs



AROGYAM
ONLINE

PARIVARTAN PSYCHOLOGY CENTER

परिवर्तन

COLOR PSYCHOLOGY : HOW COLOR AFFECT YOUR CHILD



BLUE

Calms your Child's
Mind & Body

YELLOW

Promotes Concentration,
Stimulates the Memory

PINK

Evokes Empathy,
makes your Child Calm

RED

Excites and energizes
your Child's body

GREEN

Improves Reading speed
and Comprehension

www.parivartan4u.com



परिवर्तन

Confuse about your children's future?

भारतीय भाषा, शिक्षा, साहित्य एवं शोध

ISSN 2321 – 9726

WWW.BHARTIYASHODH.COM



**INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF
MANAGEMENT SCIENCE & TECHNOLOGY**

ISSN – 2250 – 1959 (O) 2348 – 9367 (P)

WWW.IRJMST.COM



**INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF
COMMERCE, ARTS AND SCIENCE**

ISSN 2319 – 9202

WWW.CASIRJ.COM



**INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF
MANAGEMENT SOCIOLOGY & HUMANITIES**

ISSN 2277 – 9809 (O) 2348 - 9359 (P)

WWW.IRJMSH.COM



**INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF SCIENCE
ENGINEERING AND TECHNOLOGY**

ISSN 2454-3195 (online)

WWW.RJSET.COM



**INTEGRATED RESEARCH JOURNAL OF
MANAGEMENT, SCIENCE AND INNOVATION**

ISSN 2582-5445

WWW.IRJMSI.COM



**JOURNAL OF LEGAL STUDIES, POLITICS
AND ECONOMICS RESEARCH**

WWW.JLPER.COM

JLPE